Review Of Research

कृष्णार्पित गायिका : मीराबाई

डॉ. विनयकुमार एस. चौधरी
यशवंतराव चव्हाण महाविद्यालय, तुलजापुर (महाराष्ट्र).

प्रस्तावना :

हिंदी साहित्य के इतिहास में मध्ययुग का विशेष महत्व है, क्योंकि यह युग कबीर, दादू, नानक, रैदास, तुलसी, सूर आदि प्रसिध्द भक्तों का युग था। तानसेन, बैजुबावरा जैसे गायकों का देन का भी यह युग था। सोने पे सुहागा के रूप में मीराबाई भी इस युग का गौरव बढाने के लिए ही इस धरती पर अवतरित हुयी। मीरा ने अपनी भक्ति और अमृतमयी वाणी से युग को संचित किया। मीरा की वाणी काव्य के जन का कंठहार बन गयी। अपने गीतों में न जाने कितने जन्म–जन्मांतरों की संचित प्रेम–पीडा को मीरा ने अभिव्यक्त किया। उनके गीतों में माधुर्य और रस की प्राप्ति होती है। साँवरे रंग में रंगी इस प्रेम प्रतिमा की स्वर लहरी ने केवल मरूभूमि राजस्थान
को ही नहीं, बल्कि संपूर्ण भारत को अपने पावन भक्तिधारा से अभिसंचित कर दिया । राजस्थान के जलवायू से संपन्न होकर, वहाँ की संस्कृति और धर्म में पलकर, पुरूषोचित भावना के वातावरण में रहकर भी मीरा ने माधुर्य भक्ति का जो चरम विकास प्रदर्शित किया वह समस्त मानव जाति के इतिहास में एक अद्‌भुत घटना है।

राजस्थान की धरती भक्ति, वीर और शृंगार की त्रिवेणी रही है। एक ओर यहाँ का कण–कण मातृभूमि पर उत्सर्ग होने वाले वीरों के रक्त से रंजित है, तो दूसरी ओर संतों और भक्तों की अमृतमय वाणी से सींचित भी है। इस भूमि में समय–समय पर अनेक भक्त कवि पैदा हुए है जिन्होंने मरनासन्न मानव और धर्म को जीवन के चरम प्राप्य परम काव्य की प्राप्ति परम काव्य की प्राप्ति का संदेश दिया है। मीरा भी त्याग, प्रेम और भक्ति भावना की संदेश वाहक थी।

जन्म–बचपन–देहावसानः

मीराबाई का जन्म अधिकांशतया आलोचकों द्वारा सन 1803 स्वीकार किया गया है। मीरा का जन्म स्थान कुडकी बताया जाता है। राव दूदाजी के चतुर्थ पुत्र रत्नसिंह की मीराबाई इकलौती संतान थी । मीराबाई के बचपन की घटनाएँ प्रसिध्द है, शैशवावस्था में ही श्री गिरिधरलाल की मूर्ति के प्रति अदम्य लगाव, साधु से मूर्ति के लिए हठ, साधु को सपना, माता की छात्र छाया से वंचित होना, प्रारंभ में कृष्ण की मूर्ति खिलौने के रूप

में तो बाद में उस मूर्ति को ही पति मानना आदि घटनाएँ काफी दिलचस है। उपरोक्त का ब्यौरा मीरा के 'बालपनाँ की प्रीत' आदि के द्वारा प्राप्त होता है।

मीराबाई की माता उन्हें छोडकर बाल्यावस्था में ही चल बसी। उनके पितामह राव दूदाजी स्नेवश उन्हें कुडकी से बुलाकर अपने यहाँ मेडता में रखने लगे। वहीं मीरा ने अपनी प्राथमिक शिक्षा हासिल की। घर का माहोल धार्मिक होने के कारण मीरा के कोमल हृदय पर सच्चे धार्मिक जीवन का बहुत बडा प्रभाव पडा। बाल्यावस्था में ही मीरा के हृदय क्षेत्र में पडा हुआ भगवद्भक्ति का बीज, मानो अंकुरित होकर पल्लवित होने लगा।

मीरा का विवाह महाराणा सांगा के पुत्र कुँवर भोजराज के साथ हुआ। अपने ससुराल मेवाड आकर मीरा प्रथानुसार महल में 'मेडताणी' कहलाकर प्रसिध्द हो चली। दुर्भाग्यवश कुँवर भोजराज अधिक दिनों तक जीवित न रह सके। युवावस्था में प्राप्त इस दुःखमय वैधव्य के कारण उनके जीवन में बहुत बडे परिवर्तन का अवसर आ उपस्थित हुआ। पतिदेव का वियोग होते ही उन्होंने सारे लौकिक संबंधो के बंधन सहसा छिन्न–भिन्न कर दिये और चारों ओर से चित्त हटाकर अपने इष्टदेव के प्रति और भी अनुरक्त हो गयी। लौकिक आधार छिन जाने के कारण मीरा का असीम स्नेह, अनंत प्रेम, अद्‌भुत प्रतिभा एक साथ ही गिरधारी की ओर उमड पडी। मीरा के जीवन में एक नया मोड़ आया मीरा का ऐहिक सौभाग्य सिंदूर लूट गया, परंतु गिरधर के अखंड सौभाग्य का रंग अब सदा के लिए उनपर छा गया था, संसार के राग–विराग से मुक्त होकर कृष्ण में ही एकनिष्ठ हो गयी। उनका लौकिक विरह की कृष्ण प्रेम का विकल विहाग बनकर उनके गीतों में फूट पडा। उनका चित्त भगवद्भक्ति एवं साधु–संगति में प्रतिदिन अधिकाधिक लगने लगा। भगवद्दर्शन के लिए वे बहुधा बाहर के मंदिर में भी चली जाती और प्रेमावेश में आकर, पैरों में घुँघरू बाँध हाथों से करताल बजा–बजाकर भगवान के सामने गाने नाचने तक लगतीं।

मीरा की ख्याती चारों ओर फैली थी। भगवद भजन तथा भक्ति में लीन रहनेवाली मीरा गिरधर नागर के प्रेम में पागल होकर वृंदावन से द्वारिका पहूँची थी। कहा जाता है कि मीराबाई के द्वारिका जाने का पता लगाकर, मेवाड़ और मेडता दोनों राज्यों की ओर से उन्हें लौटाने के लिए ब्राम्हण भेजे जाने लगे। परंतु उनके प्रयास सफल नहीं होने पाये । प्रसिध्द है कि ब्राम्हणों के हठपूर्वक धरना देने पर मीराबाई श्री. रणछोडजी से आज्ञा प्राप्त करने के लिए मंदिर के भीतर गयी, जहाँ से फिर वापस नहीं आयी। इस घटना का समय आलोचक सन 1470 बताते हैं।

मीरा के गुरू :

मीरा के गुरू के रूप में रामानंद, रैदास, हरिदास दर्जी, चैतन्य महाप्रभु, दासभक्त, जीव गोस्वामी, रूप गोस्वामी आदि के नाम भी आते हैं, परंतु किसी गुरू विशेष के द्वारा मीरा के दीक्षित करने का कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं है फिर भी अंतर्साक्ष्य और बहिर्साक्ष्य के आधार पर रैदास को ही मीरा के गुरू माना जा सकता है–

"मेरो मन लागो हरि जी सूँ, अब न रहुँगी अटकी।
गुरू मिलिया रैदासजी, दीन्ही ज्ञान की गुटकी ।।"

मीरा का रचना संसारः

1. **नरसीजी को माहेरो** : जिसे 'नरसीजी को माहेरो' व 'नरसीजी का माहेरा' तथा 'मायरा' भी कहते हैं। यह अधिकतर चौपाई– दोहों में लिखा एक ग्रंथ है, जिसका विषय– वर्णन मीरा की किसी मिथला नामक सखी को संबधित करके किया गया है। प्रश्नोत्तर में यत्र–तत्र 'दिसी उवाच' 'मीराँ उवाच' शब्द भी आये है। माहेरा राजस्थान और गुजरात की एक लोकप्रिय प्रथा है।
2. **गीतगोविंद की टीका** : इस ग्रंथ का अभी तक कहीं पता नहीं चला है, अतः कुछ विदवानों का कहना है कि, संभवतः महाराणा कुंभा द्वारा रचित प्रसिध्द 'रसिक प्रिया टीका' को ही मीरा की रचना समझ लिया गया है।
3. **राग गोविंद** : इस ग्रंथ के अस्तित्व के विषय में भी तक संदेह हैं, यद्यपि गौरीशंकर हीराचंद ओझा के अनुसार मीरा के इस नाम से 'कविता का एक ग्रंथ' रचा था।
4. **सोरठ के पदः** मिश्र बंधुओं ने इसकी चर्चा की है। इसमें मीरा के अतिरिक्त नामदेव और कबीर के भी राग सोरठ के पद संग्रहीत हैं।

5. **मीराबाई का मलार** : ओझा जी ने लिखा है कि ''यह राग अब तक प्रचलित है और बहुत प्रसिध्द है।''
6. **गर्वागीत** : श्री. के. एम. झवेरी ने गुजरात में प्रचलित बहुत से 'गर्वा गीतों' को मीरा रचित माना है। 'गर्वा' गीत रासमंडली के गीत की भाँति गाये जाते हैं। मीराबाई के ऐसे गीतों को 'मीरानी गरवी' कहा जाता है, किंतु उसकी प्रामाणिकता में संदेह भी किया जाता है।
7. **फटकल पद**: मीराबाई की रचनाओं में सबसे अधिक निश्चित पता पदों का ही चलता हैं। इसकी संख्या अभी तक लगभग दो की समझी जाती थी और श्री झवेरीजी ने गुजराती भाषा की कुछ रचनाओं को भी लेकर इनका ढाई सौ तक होना बतलाया था। किंतु श्री. पुरोहित हरिनारायणजी का कहना है कि– ''मीरा के पद मेरे पास 500 के करीब इकट्ठे हो गये हैं । ये हस्त लिखित मुद्रित और मौखिक रूपों में प्राप्त हुए हैं, जिनका इतिहास बृहत हैं।''
8.**मीराबाई की पदावली** : मीरा की पदावली के प्रायः सभी पद गीतों के रूप में हैं' उनमें अधिकांश में पहले एक टेक देकर उसके नीचे तीन–चार अथवा अधिक चरण जोड़ दिये गये है। पूरे पद को किसी न किसी प्रकार के राग एवं रागिनी के अंतर्गत रखा गया है। गीतों की यह परंपरा हिंदी में, उसके आदि काल से ही चली आयी है। पदावली के पदों का मुख्य विषय उनकी रचयित्री के आभ्यंतरिक भावों का पूर्ण प्रकाश ही जान पडता है।

काव्य पक्षः

एक तो नारी हृदय वैसे ही कोमल, भाव प्रवण एवं अनुभूतिशील होता है। और फिर बाल्यकाल के संस्कार, यौवान का असामायिक प्रिय वियोग, रैदास जैसे सच्चे गुरू भक्त सत्संग एवं एक के बाद एक दुःखद घटनाओं का घटना । ये सब मीरा के भाव जगत को उद्वेलित मथित झंकृत कर देने के लिए पर्याप्त थे। मीरा का प्रणय वेदना भक्ति की पवित्र रंग में मिश्रीत होकर, विरह के शत्–शत स्वरों में बरस पड़ी।

''हरी! मैं तो दरद दिवाणी होई, दरद न जाणैं मेरो कोइ।
घायल की गति घायल जाणैं, की जिण लाई होइ।
जौहरि की गति जौहरि जाणैं की जिन जौहरी होइ।
सूली ऊपरी सेज हमारी, सोवणा किस विध होइ।
गगन–मंडप पै सेज पिया की, किस विध मिलना होइ।
दरद की मारी बन–बन डोलूँ, वैद मिल्या नहीं कोय।
मीरा की प्रभु मीर मिटैगी, जद वैद साँवलिया होय।

मीरा के काव्य में विरहानुभूतियाँ की व्यंजना सहज स्वाभाविक रूप में हुई हैउनकी कविता, कविता के लिए रचित नहीं अपितु उसे भावावेश में व्यक्त उद्गारों का संकलन कहना अधिक उपयुक्त होगा। उनकी प्रणय विभोर आत्मा सांसारिक मर्यादाओं की तुच्छ, लोक निंदा को उपेक्षणीय एवं पारिवारिक बंधनों को त्याज्य समझती हुई मद विव्हल गति से अलौलिक प्रियतम की ओर अग्रसर होती है, अतःवह अपनी आकांक्षओं की अभिव्यक्ति में किसी प्रकार के लज्जा–संकोच या अस्पष्ट प्रतीकों का प्रयोग नहीं करती। उनकी भक्ति भावना सच्ची है, जिसकी अभिव्यक्ति के लिए उन्हें किसी प्रकार की कृत्रिमता एवं बाह्य आवरण की अपेक्षा नहीं हुई। डॉ. शंभुसिंह मनोहर लिखते हैं– ''मीरा के पद निश्छल प्रेम पीडा की ऐसी

ऋचाएँ हैं जिनमें कल्पना का कृत्रिम कला विकास न होकर अनुभूति का सच्चा आवेग है। प्रेम की निर्धूम ज्वाला में जलते प्राणों के ये सिसकते उच्छवास है।'' मीरा पदावली में यों तो स्थान पर कवयित्री की आकर्षक कल्पनाओं को देखा जा सकता है, जो कल्पना और सहज प्रेमानुभूतियाँ से मिलकर काव्य की अनिवार्यता और मीरा के हृदय की भावनाओं को स्पष्ट निदर्शन करती है–

''इक विरहणी हम ऐसी देखि, अंसुवनि माला पोवै
तरा गिण–गिण रैन बिहानी, सुख की घडी कब आवै?

मेरा के प्रभु गिरधर नागर, मिलकर बिछुड न जावै।''

प्रेमाभक्ति :

मीरा का काव्य प्रेम और भक्ति का काव्य है। उसमें जहाँ एक ओर कृष्ण भक्ति का चरमोत्कर्ष दिखाई देता है, वहीं दूसरी ओर प्रेम, अनन्यता और त्यागशीलता भी दिखाई देती है। मीरा का संपूर्ण काव्य प्रायः आत्म व्यंजन काव्य है। उन्होंने न केवल भक्ति और प्रेम के पद लिखें हैं, अपितु अनेक ऐसे पदों का निर्माण भी किया है जो उनके जीवन की मार्मिक घटनाओं के चित्र प्रस्तुत करते हैं। मीरा के काव्य में प्रमुख रूप से जो पद मिलते हैं, वे जीवन संबंधी और वियोग वर्णन से ओत–प्रोत हैं। रूप वर्णन और लिला वर्णन, प्रकृति से संबंधित पदों में कृष्ण के रूप और लिला को बाहरी रूप से चित्रित किया गया है। कहीं–कहीं उद्दीपन विभाव के अंतर्गत प्रकृति और पर्वों का वर्णन किया गया है। उनका वर्षा वर्णन अत्यंत आकर्षक बन पडा है–

''झुक आई बदरिया सावन की, सावन की मनभावन की।
सावन में उमगियों मेरी मनवा, भनक पडी हरि आवन की।
उमड़–घुमड चहुं दिसि से आयो, दामन झर लावन की।''

मीरा के कुछ पदों में निर्गुण भक्तों की विचारधारा को भी देखा जा सकता है। सतगुरू, निरंजन, ज्ञानगली, निर्गुण सेज, सुरत की डोरी, पंचरंगी झालर आदि संत साधना के प्रभाव से ही उनके पदों में स्थान पा सके हैं। मीरा के पद कुछ ऐसे भी हैं जो उनके दर्शन संबंध विचारों को स्पष्ट करते हैं। जो भी हो, इतना निश्चित है कि मीरा दार्शनिक नहीं हैं। इसलिए वे ईश्वर, जीवन और माया के चक्रव्यूह में नहीं पड़ी है। संसार की क्षणभुंगरता और उसके स्वार्थ के प्रति वे सर्तक थी, इसी कारण वे अपनी भक्ति भावना को सशक्त आधार प्रदान करनें में सफल रही है। मीरा की भक्ति माधुर्य भाव की भक्ति है। अतः नारी हृदय की वेदना और वियोगानुभूतियों का अभिव्यंजन मीरा के काव्य में गहराई से मिलता है। मीरा की वेदना में तीव्रता तो हैं ही, त्याग, समर्पण एवं् निष्ठा का भाव भी गहरा है। मीरा में काव्यत्व की गूढ एवं् अपूर्व शक्ति थी क्योकिं उनका हृदय संवेदना एवं् प्रेम से भरपूर था। इसमें कोई संदेह नहीं की मीरा के पदों में उनका यह प्रतिभा तत्व ही प्रधान है। मीरा आदर्श ब्रज की गोपियाँ तथा उनका गोपी भाव था। मीरा स्वंय अपने आपको ललिता नामक एक गोपी का अवतार समझती थी। यही कारण है कि मीरा ने अपने प्रियतम श्रीकृष्ण से अपना परिचय पुराना बताया है। मीरा का कृष्ण प्रेम स्वकीया का प्रेम है। वे श्रीकृष्ण को अपना पति मानती है।

''ओढी चूनर प्रेम की, गिरधर की भरतार।
कैसे तोंडू राम सूं, म्हारो भोरो भरतार।

मीरा के काव्य में जो माधुर्य भावना है, वह प्रेम के कोमल भावों से युक्त है। इसी माधुर्य भावना के अंतर्गत मीरा ने अपने आराध्य को पूर्व जन्म का साथी माना है और उससे अपना संबंध जन्म–जन्मांतर तक चलनेवाला स्वीकार किया है। ऐसा लगता है कि मीरा की उपासना का लक्ष्य न तो स्वर्ग है और न मुक्ति है, वह तो केवल प्रियतम की संपर्क कामना है। ऐसी स्थिति में कह सकते हैं कि मीरा ने अपने आराध्य की उपासना माधुर्य भाव के अनुसार की है। डॉ. गणपति चंद्र गुप्त ने लिखा है– ''श्रध्दा या भक्ति का उन्मेष गुणों से चिंतक के आधार पर होता है, जबकि प्रणय की उत्पत्ति मुख्यतः सौंदर्याकर्षण के आधार पर होती है। अन्य कारणों से भी प्रणय उत्पन्न हो सकता है, किंतु सौंदर्य का प्रभाव उसमें गौण नहीं रहता है। प्रणय का प्रथम अंकुर को पल्लवित और पुष्पित होने में योग देते हैं। कहने की आवश्यकता नहीं है कि मीरा माधुर्य भावना भी श्रीकृष्ण के रूप सौंदर्य के आकर्षण से उत्पन्न हुई हैं।''

कला की सृष्टि केवल आनंद के लिए होती है, वह मानव हृदय की उत्कंठाओं को तीव्र कर परम आनंद में विलीन कर देती है। मीरा का काव्य मानव हृदय की तीव्र लालसाओं और उत्कंठाओं से ओतप्रोत एक श्रेष्ठ कवयित्री का काव्य है। विरह और मिलन, वेदना और उल्लास तथा दुःख और सुख मानव जीवन के दो तार है। ये दोनों ही जीवन के लिए आवश्यक हैं अथवा कहें कि इन दोनों से ही हमारा जीवन, जीवन कहलाता है। मीरा का काव्य एक ऐसी कवयित्री का काव्य है, जिसमें निश्छल अनुभूतियों के पवित्र भाव पद्यबध्द हुए हैं। मीरा ने अपने पदो के द्वारा जो कुछ कहा है, उसका सार इतना ही है कि वे कृष्ण की उपासिका है, उन्हीं के लिए जी

रही है, उन्हीं को पाना उनके जीवन का लक्ष्य है, कृष्ण और उनसे संबंधित स्थितियों से जुडे रहना उनका आदर्श है ओर इस प्रकार के अपने प्रेम, भक्ति भाव से परिपूर्ण हृदय की अभिव्यक्ति करने में ही उनके जीवन की सफलता है। मीरा ने कृष्ण के प्रति अपनी रागात्मक भक्ति का जो भी स्वरूप रखा है, उसमें उनका अपना भोगा हुआ अनुभव विशेष रूप से इंगित करने योग्य है। मीरा की साधना वैयक्तिक रागात्मक ऐश्वर्य की साधना है और श्रीकृष्ण का लीलामय स्वरूप तथा अलंकरण उसका आधार है। लोकविश्रुत कृष्ण से जुड़े आध्यात्मिक अनुभव को मीरा निरंतर अपना निजी अनुभव बनाती चलती है। दैन्य का आभासिक रूप किंतु लीला शृंगार की भक्ति भरी समर्पण निष्ठा मीरा की कविता की केंद्रीय संवेदना है। निसंदेह दरद दिवानी मीरा हिंदी साहित्याकाश की एक अनुपम, आध्यात्मिक आवेग में बँधी मधुर भाव संबंध कृष्णार्पित गायिका है।

संदर्भ ग्रंथ :

1. मीराबाई की पदावली– आचार्य परशुराम चतुर्वेदी
2. संत ज्ञानेश्वर एवं मीराबाई की मधुरा भक्ति डॉ. दीपा क्षिरसागर
3. हिंदी साहित्य का इतिहास– डॉ. सज्जन राम केणी